

बाल साहित्य में गुंथे मानवीय-सामाजिक मूल्य

अंजना त्रिवेदी

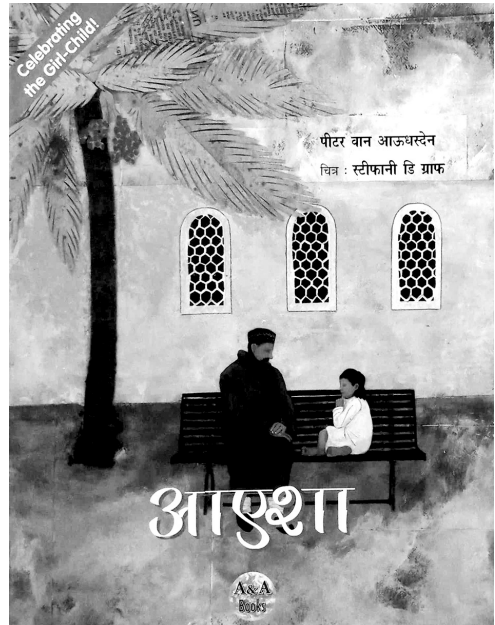
यह लेख बच्चों के जीवन में बाल साहित्य की अहमियत को दर्शाता है और बच्चों के बीच इसके अभाव की समस्या को भी रखता है। लेखिका बताती हैं कि पाठ्यपुस्तकों की विषयवस्तु से संवैधानिक, मानवीय और सामाजिक मूल्यों के बारे में सोचने के मौक़े बहुत कम बन पाते हैं, जबकि संजीदगी से चुनी गई बाल साहित्य की किताबों पर बच्चों से अर्थपूर्ण सवाल-जवाब करने से इन मूल्यों पर गहराई से सोचने-विचारने की सम्भावनाएँ ज़्यादा बनती हैं। लेख में इस बात की समझ बनाने के लिए कई किताबों, उनकी विषयवस्तु और बातचीत के उदाहरण दिए गए हैं। -सं.

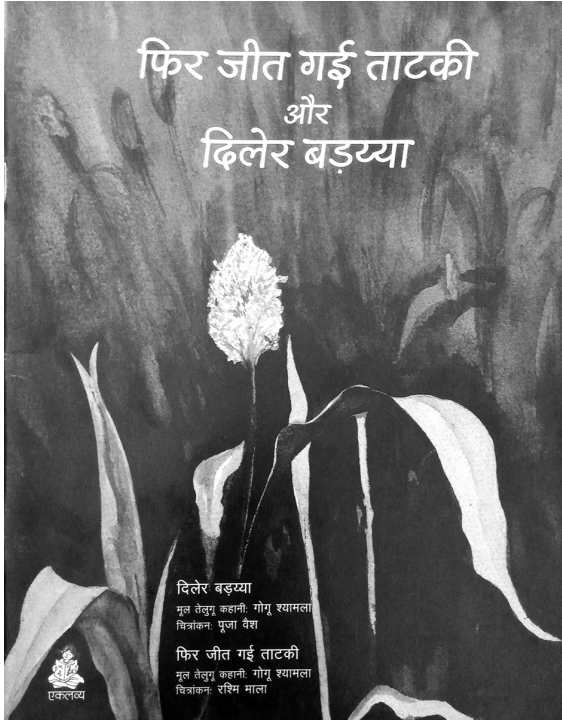
हम सभी के अनुभव हैं कि अगर बच्चों के बीच ज़्यादा-से-ज़्यादा साहित्य की किताबें रखें या साहित्य के बहाने बच्चों से चर्चा करें तो बच्चे जल्दी ही अपनी कल्पनाशीलता के ज़रिए कहानी-कविता बनाने लगते हैं। इस तरह बच्चों का शब्द-भण्डार भी समृद्ध होता है। वे एक तरफ़ तो शब्दों से खेलने लगते हैं, और दूसरी तरफ़ साहित्य में निहित मानवीय-सामाजिक मूल्य उनके मानस को प्रभावित भी करते हैं।

पिछले दस-बारह वर्षों से फ़्रील्ड में काम करते हुए समझ में आता है कि बच्चों को पाठ्यपुस्तकों तक ही सीमित कर दिया गया है। बच्चों को पाठ्यपुस्तक में दिए गए प्रश्न-उत्तर के रूप में ही अपनी बात कहनी होती है। कल्पना, भावना, तार्किक चिन्तन, अनुभव और अनुमान की स्कूलों में कोई ख़ास गुंजाइश नहीं होती है। बाल साहित्य के ज़रिए ये सारे मौक़े बच्चों को उपलब्ध हो पाते हैं, लेकिन उसके इस्तेमाल को लेकर एक आशंका, जड़ता और परहेज़ लगातार देखने को मिलता है।

कितनी बड़ी विडम्बना है कि बच्चे अपने मन में उभरी वेदना, पीड़ा और खुशी के भाव

अपने शब्दों में व्यक्त नहीं कर पा रहे हैं। अगर बच्चों के हाथों में साहित्य की विभिन्न किताबें रहतीं, उनपर शिक्षक चर्चा करते, बच्चे इन किताबों पर अपना अनुभव व्यक्त कर रहे होते, क्या तब भी स्थिति ऐसी ही होती? ग्रामीण और वंचित तबकों के घरों के बच्चों के पास लिखित





साहित्य उपलब्ध ही नहीं है। स्कूल में और फिर दूर-दूर तक लाइब्रेरी ही नहीं है। अच्छा साहित्य कम-से-कम देखने-पढ़ने को तो मिले, उसपर सोचना और उसका विश्लेषण करना तो बाद की बात है। मेरा यह भी अनुभव है कि साहित्य बच्चों को संवैधानिक मूल्यों का एहसास भी करा पाता है। पाठ्यपुस्तकों में इन मूल्यों की बात तो होती है, लेकिन वहाँ वे ऐसी चीज़ों के रूप में बच्चों के सामने आते हैं जिन्हें याद करना है और जिनका अनुसरण करना है। किन-किन परिस्थितियों में कैसे-कैसे मूल्यों से उनका सामना हो सकता है, उनके बारे में सोच पाना, परिस्थिति को समझते हुए उनपर ज़रूरी मूल्यों के हिसाब से निर्णय ले पाना, आदि से जुड़ी बातचीत की जगह ही पाठ्यपुस्तकों में नहीं होती। मूल्यों को महज़ परीक्षा के लिए याद कर लेने का परिणाम यह होता है कि बच्चे अपनी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में कई बार मूल्यों से रूबरू तो होते हैं, पर तब भी वे न तो इन मूल्यों को पहचान पाते हैं न ही उनका इस्तेमाल अपनी निर्णय प्रक्रिया में कर पाते हैं। यही नहीं, वे इनको महसूस करने,

इनके पक्ष-विपक्ष को समझते हुए इनका विश्लेषण करने और तब अपने तर्क रखने की प्रक्रिया में शामिल ही नहीं हो पाते। साहित्य इन मूल्यों को अलग नज़रिए से भी प्रस्तुत कर पाता है और इसके ज़रिए समता, समानता, बन्धुत्व और न्याय जैसे मूल्यों पर बातचीत की ऐसी सम्भावनाएँ बनती हैं कि बच्चे इन्हें महसूस कर पाएँ।

हमारे स्कूली बच्चों के जीवन में कभी-कभार थोड़ा-बहुत साहित्य यदि पहुँचता भी है तो कहानी सुनाने के अन्त में मिलने वाली शिक्षा के बहाने। शनिवार की बाल सभा में सभी बच्चे पाठ्यपुस्तक की रटी-रटाई कविता-कहानी सुनाकर और इनसे मिलने वाली नैतिक शिक्षा के बारे में एक कथन कहकर मुक्त हो जाते हैं। यहाँ तक कि 'ईदगाह' जैसी कहानी सुनाकर भी हम शिक्षा देना नहीं भूलते। साहित्य से लगाव और प्रेम तब ही होगा जब बच्चों के मन की परतों को खोला जाएगा और उनके साथ विमर्श की गुंजाइश बनाई जाएगी। कहानी के अन्त में यह शिक्षा मिलती है कि हमको 'सच बोलना चाहिए!', 'लालच नहीं करना चाहिए!', 'बेसहारा की मदद करना चाहिए!', 'थोड़े में सन्तोष करना चाहिए!', 'पशु-पक्षियों को नहीं सताना चाहिए!', आदि जैसे पूर्ण विराम वाले वाक्यों से विमर्श के सारे दरवाज़ों को पहले ही बन्द कर दिया जाता है।

जैसा कि मैंने पहले भी रेखांकित किया है, उपयुक्त साहित्य का पठन-पाठन विभिन्न मूल्यों पर न केवल बातचीत की सम्भावनाओं को खोलता है बल्कि यह बच्चों को इन मूल्यों को जीने और उनका एहसास करने का भी मौक़ा देता है। कहानियों में आई विभिन्न स्थितियों से गुज़रते हुए बच्चे उस परिस्थिति में अपने-आप को रख पाते हैं। विभिन्न किरदारों की भूमिका को समझते हुए वे जान पाते हैं कि उन्होंने कोई ख़ास निर्णय किस परिस्थिति में लिया। क्या ऐसा करना सही था? नहीं था तो क्यों नहीं था? यही नहीं, अलग-अलग मत होने पर बच्चे ही खुद आपस

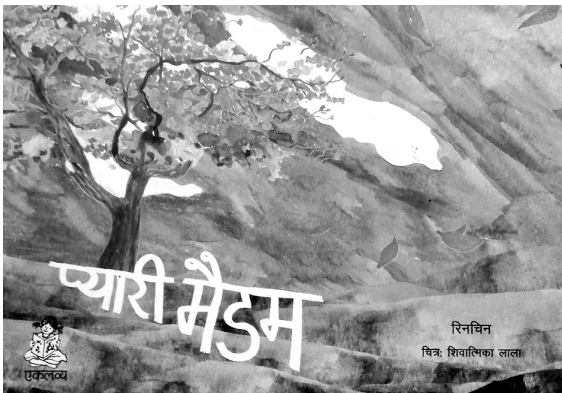
में यह बातचीत भी करते हैं कि उन्हें क्या ठीक लगता है और क्यों? वे अपने अनुभवों को भी इन कहानियों के प्रकाश में व्यक्त करते हैं और सोचते हैं कि उन्हें क्या करना चाहिए था। यह सोचना एक तरह से उन्हें भविष्य में आने वाली परिस्थितियों के लिए भी तैयार करता है। आगे बच्चों के साथ कुछ किताबों पर हुई बातचीत के कुछ उदाहरण विस्तार से दिए गए हैं।

बच्चों के साथ सामाजिक व संवेदनात्मक विषयों पर बातचीत की शुरुआत

कोविड के बाद, स्कूल आए बच्चों के साथ ‘सोशल एंड इमोशनल लर्निंग’ का एक सत्र लिया। बच्चों से घरों की स्थिति के बारे में चर्चा करते हुए कोविड के दौर के हालात जानने का प्रयास किया। कई बच्चों के परिवार में नजदीकियों की मौत हुई थी जिससे वे काफी विचलित थे। चर्चा को जब आगे बढ़ाया तब कुछ बच्चे कक्षा में रोने लगे। अपने साथ घटी घटनाओं को वे ठीक से बोल ही नहीं पा रहे थे। मुझे लगा कि बच्चे भावनात्मक रूप से काफी टूट गए हैं इसलिए कुछ बोल नहीं पा रहे हैं। बच्चों को मैंने कहा कि आज आप जो बात सभी के सामने बोल नहीं पाए, वह कल लिखकर बताना।

बच्चे घर से जो लिखकर लाए वो इस प्रकार था :

एक बच्ची ने लिखा, “मेरे दादाजी मुझे बहुत प्यार करते थे। वे बीमार थे, मुझे बहुत



बुरा लग रहा था। फिर वे मर गए। मुझे बहुत बुरा लगा। मुझे जब भी उनकी याद आती है, मुझे बहुत बुरा लगता है। मुझे उनकी बहुत-बहुत याद आती है, मुझे बहुत बुरा लगता है।”

दूसरे दिन यह बच्ची जब पत्र लेकर मेरे पास आई तो मैंने कहा, “तुम अपनी बात को और अच्छे-से लिख सकती हो कि तुम्हें दादाजी क्यों अच्छे लगते थे? तुम्हारे लिए क्या करते थे? जब उन्हें अस्पताल लेकर गए तब तुम्हें क्या उम्मीद थी?” कक्षा आठ में पढ़ने वाली इस बच्ची ने इन्हीं प्रश्नों के आसपास लिखा, “मुझे दादाजी बहुत अच्छे लगते थे। मेरे लिए लड़्डू लाते थे। अस्पताल ले जाते हुए बुरा लग रहा था। जब वह मर गए तब मुझे बहुत बुरा लगा।” वह इसके आगे कुछ लिख ही नहीं पा रही थी। दूसरे बच्चे से मैंने पूछा, “आप लिखकर लाए?” उसने फिर से पूछा, “लिखना क्या है?” आखिर बच्चे अपनी भावनाओं को क्यों नहीं उभार पा रहे हैं? बच्चे अपने मन की बातों को लिख क्यों नहीं पा रहे हैं? क्या उनके पास शब्दों का अभाव है? ऐसे में शिक्षक का क्या दायित्व है? ऐसे मुद्दे शिक्षा और शिक्षक पर बड़े प्रश्न खड़े करते हैं।

बाल साहित्य के मार्फत बच्चों से चर्चा

भोपाल ग्रामीण ब्लॉक में ईटखेड़ी संकुल के शासकीय माध्यमिक स्कूल, बीनापुर में छठवीं कक्षा के बच्चों के साथ एकलव्य प्रकाशन की किताब प्यारी मैडम पढ़ने के बाद जब बच्चों से चर्चा की तो वह अधिकांश बच्चों को अपनी ही कहानी महसूस हुई। एक बच्चे ने कहा, “कोविड के समय मेरे पापा को पुलिस ले गई थी क्योंकि उन्होंने सड़क पर सब्जी का ठेला लगाया था। तीन दिन बाद छोड़ा था। लेकिन ये बात आज तक मैंने स्कूल में किसी को नहीं बताई।” एक लड़की ने बताया, “मेरी माँ ने साहूकार के पास गहने रखकर पैसे उधार लिए थे। पैसे जमा करने के बाद भी वो गहने नहीं लौटा रहा था तो माँ बहुत लड़ी। मेरी दादी बहुत रो रही थी कि उनकी उभ्रभर की कमाई

लुट गई। मैं बहुत डर गई थी कि अब क्या होगा! बाद में पुलिस की मदद से गहने वापस मिले। सहेलियों को मैंने ये बात बताई, लेकिन स्कूल में और किसी को नहीं बता सकी।”

एक बच्ची ने दादाजी को एम्बुलेन्स में अस्पताल ले जाने का अपना अनुभव बताया। उसे लगा था कि अब दादाजी कभी लौटकर नहीं आएँगे। उसका डर सही निकला, दादाजी एक सप्ताह के बाद नहीं बचे। उनका बिस्तर-कपड़े बहुत दिनों तक घर पर ही रखे रहे। उनका सामान देखकर उनकी बहुत याद आती थी। यह बताते हुए वह रोने लगी। बाद में उसने कहा कि दादाजी को शान्ति मिल गई। अब दुख नहीं होता। सभी लोग तो मरते ही हैं।

किताब की बात को जोड़ते हुए एक बच्चे ने बताया कि पहले वो एयरपोर्ट के पास अचारपुरा की तरफ बस्ती में रहते थे। बाद में उन्हें वहाँ से हटा दिया गया तो वे इस गाँव में आकर रहने लगे। उनका एक पालतू कुत्ता था, जो वहीं रह गया।

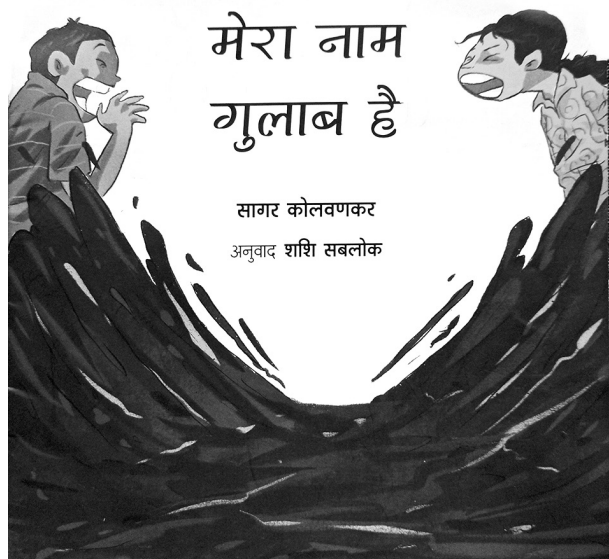
इसके बाद जब बच्चों से लिखने को कहा तो एक बच्ची ने पूछा, “क्या हम भी अपनी मैडम को पत्र लिख सकते हैं?” मैंने कहा, “बिलकुल लिख सकते हैं। जिसको भी हम अपने मन की बात बताना चाहें उसे लिखकर भी बता सकते हैं।” कई बच्चों ने पत्र लिखकर मुझे दिए पर कई ने नहीं, क्योंकि उन्हें संकोच था। पर मैं कह सकती हूँ कि उन्होंने अपनी बात खुलकर लिखी होगी, क्योंकि चर्चा में उनकी अच्छी भागीदारी थी और वे मसले को न सिर्फ़ समझ रहे थे बल्कि अपने अनुभवों से भी जोड़ पा रहे थे।

इसी तरह तूलिका प्रकाशन की किताब *मेरा नाम गुलाब है* पढ़ने के बाद की चर्चा में एक बच्चे ने कहा कि उसके पिताजी इसी स्कूल में सफ़ाई

का काम करते हैं। कहानी के माध्यम से कुछ इधर-उधर की बातों के बाद उसने कहा कि स्कूल में कुछ दूसरे बच्चे उसे अपने साथ नहीं खिलाते और चिढ़ाते भी हैं। उसने छुआछूत या भेदभाव शब्द का तो ज़िक्र नहीं किया, लेकिन वह अपने अनुभव को व्यक्त कर पा रहा था। फिर साफ़-सफ़ाई को लेकर बात हुई। दूसरे बच्चों ने ही कहा कि साफ़-सफ़ाई तो अच्छी बात है। गन्दगी ग़लत बात है। साफ़-सफ़ाई वाले तो अच्छा काम करते हैं। गन्दा काम तो गन्दगी फैलाने वाले लोग करते हैं। एक बच्ची ने कहा कि बिल्ली या कुत्ता मरा हो तो कितनी बदबू फैल जाती है, लोग उस रास्ते से गुज़रते नहीं। अगर साफ़-सफ़ाई वाले नहीं उठाएँ तो बहुत मुश्किल हो जाती है। इस बहाने इस जटिल मसले पर थोड़ी बातचीत हो पाई। कक्षा में बैठी शिक्षिका इस बातचीत से थोड़ी असहज हो रही थीं और ये कहने की कोशिश कर रही थीं कि हमारे स्कूल में ऐसा कोई भेदभाव नहीं होता है।

साहित्य जो खोल सकता है चर्चाओं के सूत्र

आज बच्चों के साहित्य में काफ़ी विविधता देखने को मिल रही है। इसमें बच्चों के बीच



द्वन्द्व, दबाव और कुण्ठा, उनके प्रति हो रही असमानता, अभाव व भेदभाव आदि को बखूबी उभारा गया है। इस साहित्य में दलित, वंचित, ग्रामीण बालिकाओं के प्रति असमानता को विविध कथानकों के माध्यम से चित्रित करने का प्रयास किया जा रहा है। यह साहित्य बच्चों की भाषा, सौन्दर्य, सवाल, कल्पनाशीलता और रचनात्मकता के साथ ही जीवन के प्रति उनके नज़रिए का भी पता देता है। कुछ किताबों को लेकर हमने बच्चों व शिक्षकों के साथ काम

किया, उसके कुछ उदाहरण ऊपर भी आए हैं। यहाँ कुछ और किताबों के नाम और उनकी विषयवस्तु के बारे में जानकारी दी गई है। बच्चों और शिक्षकों के साथ इन किताबों के माध्यम से चर्चा करने पर कई सारे मुद्दों / अवधारणाओं को सीखने में मदद मिल सकती है। इन किताबों पर चर्चा के माध्यम से बच्चों में नई रोचकता, प्रेरणा, उत्सुकता और चिन्तन के आयाम खोलते हुए कई सारे कौशलों का विकास किया जा सकता है।

क्रम	किताब का नाम और लेखक	किताब की विषयवस्तु	संवैधानिक मूल्यों से जुड़े कौशलों का विकास
1.	हम भारत के बच्चे : हमारे संविधान की उद्देशिका, लीला सेठ	किसी भी देश के बच्चों को यदि अच्छा नागरिक बनाना है तो बच्चे हमारे संविधान के उद्देश्यों को जानें।	संवैधानिक मूल्यों को जानना और समझना। यह मूल्य बने कैसे? इन मूल्यों को कैसे अपनाया जाए?
2.	बापू की पाती: महात्मा गाँधी के जीवन प्रसंग, सोपान जोशी	महात्मा गाँधी के जीवन और कर्मयात्रा पर आधारित उनकी सचित्र जीवन कथा को प्रस्तुत किया है। यह प्राथमिक कक्षाओं के लिए बहुत बेहतरीन किताब है। यह बिहार सरकार के द्वारा कक्षा तीसरी से आठवीं तक के लिए बनाई गई है। इसमें 'अ' से अहिंसा, 'आ' से आश्रम जैसे हर वर्ण को लेते हुए गाँधी के काम की कहानी लिखी है।	महात्मा गाँधी के बारे में जानकारी, देश की आज़ादी के संघर्ष और अँग्रेज़ी शासन से अवगत कराना। वर्णों को लेकर नयापन। नए शब्दों, नए नगरों और शहरों की जानकारी।
3.	एक था मोहन : महात्मा गाँधी का जीवन परिचय, सोपान जोशी	इस पुस्तक में मोहन से महात्मा गाँधी बनने की पूरी यात्रा का ज़िक्र है। इसे पढ़ाना बच्चों के लिए काफ़ी रोचक और जानकारी से भरा है।	बचपन की छवियों, धारणाओं और मान्यताओं को बड़े होने तक किस प्रकार खारिज कर देते हैं। स्वतंत्रता के पूर्व के संघर्ष को जानना और समझना।
4.	प्यारी मैडम, रिनचिन, एकलव्य प्रकाशन	इस कहानी के माध्यम से बच्ची अपने विस्थापन के दर्द को अपनी शिक्षिका को पत्र लिखकर बताती है।	आदिवासी समाज, रोज़गार, विस्थापन और शिक्षा के विषयों को जानना और समझना।

5.	माँ, कांचा आइलैया शेफ़र्ड, हिन्दी अनुवाद : सुशील शुक्ल	एक गड़रिया बच्चा जिसकी माँ स्कूल में अपने बच्चे के दाखिले के लिए शिक्षक से जद्दोजहद करती है। बच्चा, जो एक विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर है, अपनी जाति के लोगों को लामबन्द करने के अपनी माँ के संघर्षों को बड़े गर्व के साथ याद कर रहा है।	जाति संघर्ष को समझना। समुदायों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति को जानना।
6.	मेरा नाम गुलाब है, सागर कोलवणकर, हिन्दी अनुवाद : शशि सबलोक, तूलिका प्रकाशन	स्कूली बच्ची को गुलाब के साथ पढ़ने वाले बच्चे उसे 'बदबूदार गुलाब' बुलाते हैं। इसलिए नहीं कि उससे बदबू आती है, बल्कि इसलिए कि उसके पिता मैला ढोते हैं। आज भी उसके पिता को हाथों से मैला साफ़ करना होता है। विज्ञान की बदौलत वह बदलाव की ओर पहला क़दम रखती है।	बच्चे ग़ैर-बराबरी और जातिगत भेदभाव को जानें- समझें। अधिकारों को जानना और समझना। लोक कल्याणकारी राज्य को आलोचनात्मक रूप से परखना।
7.	फ़िर जीत गई ताटकी और दिलेर बड़य्या, मूल तेलुगु कहानी, गोगू श्यामला, एकलव्य प्रकाशन	ज़िन्दगी की बातें करती ये कहानियाँ ऐसे समुदायों के बच्चों की कहानियाँ हैं जो तथाकथित पढ़े-लिखे समुदायों में अपने परिवार के लिए जगह बनाना चाहते हैं।	छुआछूत और दलितों के प्रति रवैए को देखना और जानना। न्याय और समानता को समझना।
8.	न्यायसंगत होने का महत्त्व - नेल्ली बलाई की कहानी	नेल्ली का असली नाम एलिजाबेथ कॉकरेन था। जब वह 20 साल की थी और वह लेखक बनाना चाहती थी, उसने पिट्सबर्ग डिस्पैच अखबार में एक लेख पढ़ा, जिसका शीर्षक था 'कौन-से काम लड़कियों के लिए उपयुक्त हैं?' उस समय महिलाओं को वोट देने का अधिकार नहीं था और रोज़गार के अवसर भी काफ़ी कम थे।	सामाजिक विषमताओं को समझना। न्यायसंगत समाज की ओर क़दम।
9..	लड़का क्या है? लड़की क्या है?, कमला भसीन	बच्चियों की ज़िन्दगी में भेदभाव और असमानता क्यों है? ग़ैर- बराबरी पर सवाल उठाती है।	प्राकृतिक और शारीरिक अन्तर से भेदभाव। असमानता और भेदभाव को जानना।

10.	आएशा, पीटर वान आऊधस्देन, ए एण्ड ए पब्लिकेशन	आएशा एक छोटी-सी आम लड़की है। उसे सुल्तान को अपनी मुसीबतों और उनके राज्य में जो ग़लत चल रहा है, उसके बारे में बहुत कुछ बताना है। यह कड़वी-सच्ची बातें सुल्तान को बताने की हिम्मत कोई नहीं रखता।	राजतंत्र और लोकतंत्र के अन्तर को जानें-समझें। लोक कल्याणकारी राज्य में मुखिया तक अपनी बात किन माध्यमों से कही जा सकती है।
11.	काश ! मुझे किसी ने बताया होता !! कमला भसीन	इसमें किशोरावस्था में बच्ची के मन में उठने वाले प्रश्न हैं।	अधिकार और न्याय के बारे में जानना।
12.	कोई ऊपर कोई नीचे, पलोमा वलिद्विया	पृथ्वी गोल है। एक हिस्सा ऊपर है और एक नीचे। लेकिन लोग दोनों तरफ़, ऊपर या नीचे, एक जैसे ही हैं।	विविधता और समानता के मूल्यों को जानें।
13.	क्रिस्सों की दुनिया, प्रमोद पडवल, उमेश कुमार	इस पुस्तक में बाल कहानियों को सम्मिलित किया है। पाठकों को राष्ट्र-निर्माताओं, वैज्ञानिकों और श्रेष्ठ खिलाड़ियों के जीवन संघर्ष से रूबरू करवाया गया है।	महात्मा ज्योति राव फुले, अम्बेडकर, अब्दुल कलाम के साथ मराठी राजनैतिक और स्वतंत्रता आन्दोलन के संघर्ष की कहानी को पढ़ना और समझना।



यह एक छोटी सूची है। इसमें और किताबें जोड़ी जा सकती हैं और इस सूची को लगातार बढ़ा बनाया जा सकता है। यदि हम दस-बारह किताबें ही प्राथमिक और उच्च प्राथमिक के बच्चों के साथ इस्तेमाल कर पाएँ, पढ़कर चर्चा करवा पाएँ तो हम बच्चों में कितने ही कौशलों और दक्षताओं को विकसित होने का मौक़ा बना सकते हैं। साथ ही मानवीय-सामाजिक मूल्यों की झलक भी इसी बहाने मिलती रह सकती है।

अंजना त्रिवेदी विगत ढाई दशकों से सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हैं। शिक्षण-प्रशिक्षण के साथ ही पत्र-पत्रिकाओं के लिए सतत लेखन रहा है। महिला स्वास्थ्य, शिक्षा एवं नागरिक अधिकार इनके प्रमुख विषय रहे हैं। अंजना ने पिछले दस सालों तक अजीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, भोपाल, मध्यप्रदेश में सामाजिक विज्ञान स्रोत व्यक्ति के रूप में काम किया है। वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से बतौर सलाहकार कार्य कर रही हैं।

सम्पर्क : trivedi20anjana@gmail.com